द्वितीय अध्याय

रचना दृष्टि और सर्जना के आयाम

रचनादष्टि और सर्जना के आयाम

वस्तु जगत, यथार्थस्थिति, सामाजिक करूणा पद्मावत के ऐसे अंग हैं जिनके विश्लेषण के अभाव में महाकाव्यात्मक आयाम अपूर्ण रह जाता है।

वस्तु जगत–युग जीवन का एक सम्पूर्ण औश्र जीवन्त चित्र उपस्थित करने के लिए महाकाव्य में जीवन के अनेक प्रसंगों और प्रकषति के विविध रूपों का विशद, कलात्मक और प्रभुविश्णु वर्णन होता है ये वर्णन ?– वैविध्य रसभिव्यक्ति एवं भावोद्रक में सहायक होते है। पद्मावत के वस्तु वर्णन प्रसंग में जायसी ने अपनी असाधारण वर्णन शक्ति का परिचय दिया है। सिंहलद्वीप,जल क्रीडा, सिंहलद्वीप यामा, समुद्र, विवाह, युद्ध नखशिख आदि का वर्णन किया है। इस वर्णन से सामाजिक पद्धतियों एवं मानवीय व्यवहारों का दृष्य उपस्थित होता है।

यथार्थ स्थिति

यथार्थ स्थिति के अन्तर्गत कथवस्तु विन्यास नायक, चारेत्र चित्रण, मार्मिक प्रसंग आदि का वर्णन आता है। पद्मावत में राजा रत्नसेन पद्मावती की प्रेम कथा है। रत्नसेन नायक है इनके अतिरिक्त नागमती, गोरा, बादल, अलाउद्दीन आदि का चरित्र चित्रण है मार्मिक प्रसंगों में पद्मावती का रूप सौन्दर्य एवं विरह की दिशा का चित्रण है।

सामाजिक करूणा

इस के अन्तर्गत नागमती का विरह वर्णन है इसके साथ साथ रत्नसेन के

मृत्यु के समय की स्थिति आदि है जो रसानुभूति की सर्जना करती है। सामाजिक करूणा मानव मन में रसानुभूति पैदा करती है।

वस्तुतः ये तीनों तत्व पद्मावत के महाकाव्य व के अंग है। इन तीनों की उपचिति पद्मावत के महाकाव्यत्व के अन्तर्गत हुई है।

अस्तु तीनों का समवेत पर्यवसान पद्मावत के महाकाव्यत्व मे होता है। यहां यह तथ्य उल्लेखनीय है कि जायसी भी आध्यात्मिक चेतना मानव जीवन को साथ साथ लेकर चलती है।

पद्मावत का महाकाव्यत्व

पद्मावत के महाकाव्य पर विचार करते हुए डा0 शम्भूनाथसिंह ने लिखा है– "पद्मावत अलंकृत या साहित्यिक महाकाव्य है अर्थात् उसकी रचना एक विशिष्ट कवि द्वारा परम्परा प्राप्त साहितयिक शैली में हुई है। उसकी शैली में विकसनशील महाकाव्यों में प्राप्त होने वाले अनेक तत्व अलौकिक और अति प्राकृत शक्तियों में विश्वास, कथात्मक आदि का वर्तमान है। कन्याहरण, सिंहल की भयंकर यात्रा, जहाज टूटना अन्य साहसिक कार्य, अलौकिक अति प्राकृत शक्तियों का मानव के साथ सम्बन्ध, जादू की सिधिगुटिका,, शास्त्र और मानव भाशा– भाशी शुक आदि रोमाचंक तत्वों का भी समावेश किया गया है। इसमें रोमांचक तत्वों पर विचार करने के पश्चात् उन्होंने लिखा है– " पद्मावत को हमने रोमांचक शैली का महाकाव्य माना है ।" इसमें रोमांचक तत्व बहुत हैं, पर वे कवि के महदुद्देश्य और प्रतीकात्मक शैली, काव्यत्मक वर्णन तथा उत्तरार्द्ध की कथा के ऐतिहासिक आधार के कारण नियन्त्रित है। अतः यह कथा, आख्यायिका न होकर रोमांचक शैली का महाकाव्य है।"

पं0 रामचन्द शुक्ल का मत है कि प्रबन्ध क्षेत्र के भीतर दो सर्वश्रेश्ठ काव्य

है, "रामचरित मानस' औश्र 'पद्मावत'। पद्मावत्। पदमावत हिन्दी साहित्य का एक जगमगता रत्न है।"

1. सुसंगठित और जीवन्त कथावस्तु

पद्मावत में चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और सिंहल की राजकुमारी की प्रेमकथा वर्णित है। सम्पूर्ण काव्य की कथा को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध। पूर्वार्द्ध की कथा लोक विश्रुत पदमावती रानी की कहानी है। उत्रार्द्ध की कथा में अलाउद्दीन के आकमण, जौहर आदि ऐतिहासिक तथ्यों की छांक देकर उसे ऐतिहासिक सी कथा बना देने का सफल प्रयत्न है। प्रासंगिक एवं आधिकारिक कथाओं में पूरी अन्विति वर्तमान है। इसकी कथा पर्याप्त विस्तष्त और व्यापक है। उसमें कल्पना और इतिहास का अद्भूत समन्वय मिलता है। सम्पूर्ण कथा रत्नसेन और पद्मावती से सुसंबद्ध है। सम्पूर्ण कथा का विभाजन 58 खंडों मे किया गया है। खण्ड न विशेश बड़े है और न विशेश छोटे। कुछ खण्ड अवश्य छोटे है। पर अपने छोटे रूप में भी वे प्रभुविश्णु एवं महत्वपूर्ण है। "रत्नसेन जन्मखण्ड, रत्नसेन सती खण्ड और रत्नसेन साथी खण्ड' अल्प विस्तार वाले खण्ड है। किन्तु इस कारण कथा प्रवाह में कही भी अवरोध उत्पन्न नहीं होता । कथा में आदि से अन्त तक कवि की महान प्रतिभा और कल्पना विलास का सौन्दर्य्र दर्शनीय है। अलाउद्दीन का दर्पण में पद्मावती की छाया देखना , रत्नसेन का वन्दी रूप में दिल्ली – गमन, देवपाल की दूती का प्रसंग प्रभषति अनेक घटनाएं किसी न किसी ऐतिहासिक तथ्य पर आधारित है।, किन्तु पद्मावतमें वे सर्वथा कवि कल्पित है।

स्पश्ट कि इसका विशय महान और व्यापक है। इसमें प्रेम पीर के काव्यात्मक सौन्दर्य का चरम विकास हुआ है। अरस्तू के अनुसार –" जीवनन्त कथानक का गुण यह है कि उसमे आदि , मध्य और अन्त अर्थात् उसका सर्वार्ड समानुपातिक विकास

हुआ हो। पदमावत मे पदमावती विवाह तक की घटनायें कथा के आदि भाग के अन्तर्गत है। विवाह के बाद राघव चेतन देश निकाला– खंड तक की कथा मध्य भाग भाग के और प्रेम प्रवण मानवतावाद की सरस्वती प्रवाहित हो रही है। इस प्रकार मानवतावाद की प्रतिष्ठा जाति, धर्म आदि की कषत्रिम दीवालों को तोड़ कर मानव मात्र को एक सूत्र में बांधना ही पदमावत का उद्देश्य है और जायसी अपने इस उद्देश्य की पूर्ति में पूर्ण सफल हुए है।

महती प्रतिभा, मार्मिक प्रसंगों की सृष्टि एवं तज्जन्य गांभीर्य :

महती प्रतिभा सम्पन्न कवि जब किसी महत्शक्तिमयी प्रेरणा से उद्वेलित और अभिभूत होता है तो वह महाकाव्य की सर्जना में प्रवष्त्त होता है। महाकवि मार्मिक स्थलों का सुन्दर विबान करता चलता है। वह जीवन के मर्मस्पर्शी प्रसंगों का पारखी होता है। ये मर्मस्पर्शी चित्रण मानव हष्दय की रागात्मिका वृत्ति को जागृत कर देते है। महाकवि के प्रबन्ध रस से नीरस पद्यों में भी रसवृत्त आ जाती है–

> रसवत्पद्यान्तर्गत नीरस पदानामिव पद्यरसेन प्रबन्ध सेनैवतेषां रसवत्ताङ्हगीकारात।

पदमावत के घटनाचक्र के अन्तर्गत ऐसे स्थलों का पूरा सन्निवेश है, जो मानव की रागात्मिका वषत्ति को उद्बोधित कर देते हैं, उसके हष्दय को भावमग्न कर देते है। जायसी ने वस्तु वर्णन के रूप में और पात्र द्वारा व्यंजता के रूप में इन प्रसंगों को कथा प्रवाह के बीच रखा है; वस्तुतः कथावस्तु की गति इन्हीं स्थलों तक पहुंचते के लिए होती है। पदमावत में ऐसे स्थल अनेक हैं जैसे मायके में कुमारियों की स्वच्छंद कीड़ा, रत्नसेन के प्रस्थान पर नागमती आदि का शोक, प्रेम मार्ग के कष्ट, रत्नसेन को शूली की व्यवस्था, उस दण्ड के संवाद से विप्रलंभ की दशा में पदमावती की करूण सहानुभूति, रत्नसेन और पदमावती का संयोग, सिंहल से लौटते समय

सामुद्रिक दुर्घटना से दोनों की विह्वल स्थिति, नागमती की विरह दशा, वियोग–संदेश, रत्नसेन की प्रणय स्थिति अलाउद्दीन के संदेश पर रत्नसेन का गौरवपूर्ण रोष और युद्धोत्साह, गोरा बादल की स्वामिभक्ति और क्षत्रतेज से भरी प्रतिज्ञा, अपनी सजन नेत्रा भोली भाली वधू की और वे पीठ फेर कर बादल का युद्ध के लिए प्रस्थान, देवपाल की दूती के आने पर पदमावती द्वारा सतीत्व गौरव की अपूर्व व्यंजना, पदमावती और नागमती का उत्साहपूर्ण सहगमन, चित्तोड़ की दशा आदि। इनमें से पांच स्थल तो बहुत ही अगाध और गंभीर हैं। नागमती वियोग, गोरा–बादल–प्रतिज्ञा, कुंवर बादल का घर से निकल कर युद्ध के लिए प्रस्थान, दूती के निकट पदमावती द्वारा सतीत्व–गौरव की व्यंजना और सहगमन। ये पांचों ग्रंथ के उत्तरार्द्ध में है। पूर्वार्द्ध में तो प्रेम ही प्रेम है, मानव ,जीवन की और उदात्त वृत्तियों का जो कुछ समावेश है, यह उत्तरार्द्ध में है। ये प्रसंग अत्यन्त मार्मिक, सरस और प्रभाविष्णु हैं।

सचमुच जायसी की प्रतिभा महनीय थी। उन्होंने ब्रहा, जीव और संसार की गुत्थी को सुलझाने के लिए जिस जीवन्त कथानक की कल्पना की है और उसमें अत्यन्त मर्मस्पर्शी स्थलों का चुनाव करके हृदय का समग्र रस निचोड़ कर जिस प्रकार अपने काव्य को आकर्षक और रसमय बना दिया है और साथ ही लौकिक शक्ति की अनुभूति को उन्होंने जिस कुशलता से ऊर्ध्वगामी बनाकर आध्यात्मिक जगत की ओर अग्रसर किया है, वैसा सामान्य प्रतिभा वाला कवि नहीं कर सकता है। काव्य रचना का उद्देश्य तो कुतवन, मंझन, उसमान आदि सबका वही था जो जायसी का था, किन्तु उन कवियों में जायसी जैसी स्वाभाविक और शक्तिमती काव्य प्रतिभा नहीं थी। जायसी की काव्य प्रतिभा के दर्शन सबसे अधिक पद्मावत के रूप सौन्दर्य और विरह की मनोदशाओं के वर्णन मे होते है। जिनमें उन्होंने परम सत्य के चिरंतन, अनन्त और निर्वचनीय सौन्दर्य को मानव जगत

में प्रतिबिम्बित करके भी उसकी विराटता और अनन्तता को नष्ट नहीं होने दिया, साथ ही उस निर्वचनीय वर्ण्यवस्तु की आभा को पूर्णतः झलका भी दिया है। समासोक्ति एवं प्रतीकात्मक शैली की अभिव्यक्ति विराट काव्य चेतना की ही देन हो सकती है।

पदमावत में प्रेम, उत्साह, वैराग्य, शोक, करूणा, भक्ति, भय आदि स्थायी भावों की गंभीर अभिव्यंजना हुई है। क्या वैविध्यपूर्ण मनोदशाओं की मार्मिक अभिव्यक्ति और क्या अनुभूतियों की सच्चाई–गहराई क्या अभिव्यक्ति की मर्मत्पर्शिता औश्र क्या तीव्रता प्रभविष्णुता, क्या प्रेम प्लावित भाव और क्या तीव्र सौन्दर्य चेतना की विराटता प्रतिभासिकता, क्या कथा की लौकिकता और क्या समासोक्ति पद्धतिजन्य आध्यात्मिकता, गूढ़ता, क्या परमसत्ता के दर्शन के लिये व्याकुलता और क्रूा तड़पन जन्य प्राणशक्ति मार्मिक अनुभूति और प्रियतम के दर्शन इत्यादि महान तत्वों ने पदमावत में गुरूता गंभीरता और महाकाव्य के उपयुक्त महत्ता की प्राण प्रतिष्ठा की है।

सूफी विद्वान और संत पदमावत का आदर पुराण की भांति करते रहे हैं। सोलहवीं शताब्दी से ही विविध भाषाओं में इसका अनुवाद होने लगा था। इसकी अनेकानेक प्रतियां फारसी, अरबी, उर्दू, नागरी आदि में लिखी गई । इस ग्रंथ के अनेक संस्करण भी प्रकाशित हुए है। इसकी अनेक टीकायें भी लिखी गई है। इन बातों से स्पष्ट है कि 'व्यापक प्रभाव और लोकप्रियता की दृष्टि से भी देखने से रामचरितमानस के बाद पदमावत का ही नाम आता है।

महाकाव्य की अमरता उसकी आन्तरिक प्राणशक्ति, सशक्त प्राणवता और जनवरूद्ध जीवनी शक्ति के कारण भी होती है। गंभीर जीवनदर्शन,मौलिकता महान उदार सार्वभौमिक एवं सार्वकालिका प्रेम सन्देश, लोक प्रवृत्तियों का अन्तः स्पन्दन, लोक भाषा का पूर्ण निखार, लोकमंगल की भावना, आध्यात्मिक साधना, मानवतावाद

आदि ने पदमावत में एक महान जीवन दर्शन और सशक्त प्राणवता का उपस्थापन किया है। उस युग की साधना का शाश्वत अमर संदेश पदमावत में मूर्तिमान है।

आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी के शब्दों में– "जीवन के अनेक स्वरूपों और उनकी अनेक स्थितियों को महाकाव्य में स्थान मिलता है। चरित्रों के विभिन्न आदर्श उसमें रहा करते है। महाकाव्यों में स्वभावतः वस्तु चित्रण की प्रधानता होती है। प्रकृति के सौंदर्य पर वर्णन भी वस्तु रूप में ही होता है।

इन बातों थोड़े से परिवर्तन के साथ हम पदमावत के लिए भी कह सकते हैं कि पदमावत में महाकाव्य के कतिपय परम्परागत लक्षण भले ही न मिलें, फिर भी उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट है कि पदमावत हिन्दी के श्रेष्ठतम महाकाव्यों में हैं।

अन्तर्गत है और उसके पश्चात् की कथा अन्त के रूप में है। स्पष्ट ही इसके आदि मध्य और अन्त में रामानुपातिक विकास द्रष्टव्य है।

पद्मावत में नाटकीय संधियों और कार्यावस्थाओं का भी सुन्दर प्रयोग हुआ है। उत्तरार्द्ध की कथा में प्रारम्भ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति और फलागम इन पाँचों कार्यावस्थाओं एवं मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श एवं निर्वहण इन पाँच सन्धियों की सम्यक योजना हुई है। इस कथा में रत्नसेन को फल (पदमावती) की प्राप्ति हो जाती है। उत्तरार्द्ध की कथा में मुख्य रूप से प्रारम्भ, प्रयत्न और प्राप्त्याशा की ही संयोजना हुई है। अन्त में नियताप्ति और फलागम को प्रत्यक्षतः न दिखाकर निगत और अवसान नामक पाश्चात्य ढंग की कार्यावस्थायें दिखलाई पड़ती हैं।

'पदमावत' का 'कार्य' है पदमावती का सती होना। सम्बन्ध–निर्वाह के ही अन्तर्गत गति के विराम का भी विचार कर लेना चाहिए। यह कहना पड़ता है कि

पदमावत में कथा की गति के बीच–बीच अनावश्यक विराम बहुत से हैं। मार्मिक परिस्थिति के विवरण और चित्रण के लिए घटनावली का जो विराम पहले कह आये हैं वह तो काव्य के लिए अत्यन्त आवश्यक विराम है। क्योंकि उसी से सारे प्रबन्ध में रसात्मकता आती है।"[1] जायसी का सम्बन्ध निर्वाह अच्छा है। एक प्रसंग से दूसरे प्रसंग की शृंखला बराबर लगी है। कथा–प्रवाह खण्डित नहीं है।[2] 'पदमावत का कथानक पूर्णतः सुसंघटित और सुशृंखलित है। इस प्रकार अरस्तूकी 'कार्यान्वित' और पाश्चात्य देशीय कार्यावस्थाओं की कसौटी पर पदमावत पूर्णतः खरा उतरता है। पदमावत में कोई भी घटना कथा की दृष्टि से अनावश्यक नहीं है। सभी घटनायें और प्रसंग एक दूसरे से कार्य कारण शृंखला में बंधे हैं। प्रत्येक घटना कथा–प्रवाह में योग देती है। पदमावत का कथानक पूर्णतः सुसंघटित कलात्मक और अन्विति युक्त है।

2. नायक

कथावस्तु के अनन्तर महाकाव्य के तत्वों में 'नायक' तत्व को प्रमुख स्थान दिया जाता है। वस्तुतः नायक के रूप में एक महत्तम चरित्र की सृष्टि के लिए ही कवि महाकाव्य की सर्जना में प्रवृत्त होता है। इस प्रसंग में कवीन्द्र रवीन्द्र का कथन उल्लेख है –

'मन में जब एक वेगवान अनुभव का उदय होता है, तब कवि उसे गीतिकाव्य में प्रकाशित किए बिना नहीं रह सकते। इसी प्रकार जब मन में एक महत् व्यक्ति का उदय होता है, सहसा जब एक महापुरुष कवि के कल्पना–राज्य पर अधि ाकार आ जमाता है, मनुष्य–चरित्र का उदार–महत्व मनश्चक्षुओं के सामने अधिष्ठित

---

1. पं0 रामचन्द्र शुक्ल : जायसी ग्रन्थावली (भूमिका), पृ0 75.
2. वही, पृ0 72.

होता है, तब उसके उन्नत भावों से उद्दीप्त होकर, उस परम पुरुष की प्रतिभा प्रतिष्ठित करने के लिये कवि भाषा का मन्दिर निर्माण करते हैं, उस मन्दिर की भित्ति पृथ्वी के गम्भीर अन्तर्देश में रहती है और उसका विचार मेघों को भेदकर आकाश में उठता है, उस मन्दिर में जो प्रतिमा प्रतिष्ठित होती है, उसके देवभाव से मुग्ध और उसकी पुण्य किरणों से अभिभूत होकर नाना दिग्देशों से आ–आकर, लोग उसे प्रणाम करते हैं। इसी को कहते हैं महाकाव्य।"[1]

पदमावत का नायक रत्नसेन महाकाव्योचित नायक है। नायक में बुद्धि, उत्साह, स्मृति, प्रज्ञा, शौर्य, औदार्य, गांभीर्य, धैर्य, स्थैर्य, माधुर्य, कला–कुशलता, विनय, निरीगता, शुचिता, स्वाभिमान, प्रियवादिता, जनानुरागिता वाग्मिता, महावंशत्व, दृढ़ता, तत्वशास्त्रज्ञता, अग्राम्यता, शृंगारिकता, सौभाग्य आदि विशेषतायें होती हैं।[2] रुद्रट[3] और विश्वनाथ[4] कविराज ने भी थोड़े अंतर के साथ इन्हीं गुणों को आवश्यक माना है। विश्वनाथ कविराज के अनुसार धीरोदात्त नायक वह है जो अपनी प्रशंसा नहीं करता और जिसमें क्षमाशीलता, अतिगम्भीरता, स्थिर प्रकृतित्व महासत्तत्व, गर्वीलापन और दृढ़ निश्चयता हो।[5]

इस दृष्टिकोण से पदमावत का रत्नसेन एक महासत्व धीरोदात्त नायक के सभी गुणों से अलंकृत, दृढ़ प्रतिज्ञ, त्यागी, विनयी, स्वाभिमानी, क्षमाशील, गम्भीर और शूर स्वभाव वाला आदर्श प्रेमी है। यह सद्वंशीय, क्षत्रिय, राजा और महान् शूर–वीर योद्धा भी है। "रत्नसेन पर्याप्त गम्भीर है, पदमावती के प्रति उसका प्रेम उन्माद नहीं है, वह एक दृढ़ और स्थिर प्रेम है। सिंहल से लौटते समय गन्धर्वसेन से कही गई उसकी विनयशीलता की घोषणा करती हैं।"[6]

---

1. मेघनाथ बध (हिन्दी–अनुवाद), भूमिका, पृ0 137.
2. वागृभट : काव्यानुशासन, अध्याय 5, (नायक–प्रकरण)।
3. रुद्रट : काव्यालंकार, अध्याय 12 (7–8 श्लोक)।
4. विश्वनाथ : साहित्य–दर्पण, अध्याय 3, श्लोक 20.
5. वही, श्लोक 22.
6. डा0 श्यामसुन्दरदास : रूपकरहस्य, पृ0 64–65.

नायक रत्नसेन का चरित्र एक आदर्श प्रेमी, त्यागी और बलिदानी के रूप में महान् है।

अन्य पात्रों में नागमती आदर्श भारतीय पतिप्राण देवी है, शुक गुरु प्रतीक और अप्राकृत शक्ति वाला पक्षी है। पद्मावती आदर्श भारतीय प्रेमिका के रूप में (भी) चित्रित है। अलाउद्दीन और राघवचेतन असत् पक्ष के प्रतिनिधि पात्र हैं। देवपाल भी उन्हीं की तरह है।

रसात्मकता और प्रभावान्विति

भावोद्रेक एवं रसात्मकता महाकाव्य का एक प्रमुख तत्व है। पदमावत में मुख्य रूप से आद्यंत रति–भाव की व्यञ्जना हुई है, इसलिए इसमें श्रृंगार रस का प्राध ान्य है। इसमें करुणा, वीभत्स, वीर, शान्त प्रभृति रसों का भी समावेश है। इसके आरम्भ और अंत में शान्त रस का चित्रण हुआ है। इस काव्य के अन्त में करुणा–प्लाबित शान्त रस की अत्यन्त सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। जायसी ने अन्तिम दृश्य का वर्णन इस प्रकार किया है कि वहाँ निर्वेद ही निखार पा सका है। "अन्तिम दृश्य से अत्यंत शान्तिपूर्ण उदासीनता बरसती है। कवि की दृष्टि में मनुष्य–जीवन का सच्च अन्त करुणा–क्रन्दन नहीं, पूर्ण शान्ति है। राजा के मरने पर रानियां केवल विलाप ही नहीं करती हैं, बल्कि इस लोक से अपना मुँह फेर कर दूसरे लोक की ओर दृष्टि किए आनन्द के साथ पति की चिता में बैठ जाती हैं। इस प्रकार कवि ने सारी कथा का शान्त रस में पर्यवसान किया है।[1] इतना होने के बावजूद प्रेम और रति–भाव के प्राधान्य के कारण शुक्लजी[2] ने भी इसे श्रृंगार रस प्रधा काव्य माना है। डा0 शम्भूनाथ सिंह का कथन है कि "यदि जायसी का लक्ष्य लौकिक प्रेम–पंथ के

---

1. पं0 रामचन्द्र शुक्ल : जायसी–ग्रंथावली (भूमिका), पृ0 68.
2. वही, पृ0 71.

माध्यम से आध्यात्मिक प्रेम–पंथ का निरूपण है और इसके लिए यदि उन्होंने प्रतीक और संकेत पद्धति–द्वारा–आध्यात्मिक प्रेम की स्पष्ट व्यंजना भी की है। तो उसमें रहस्यवाद की दृष्टि से श्रृंगार रस को नहीं, शान्त रस को ही प्रधान मानना पड़ेगा। अन्तिम दृश्य में जो रस व्यंजित होता है, वह उसी अप्रस्तुत पक्ष के शान्त रस की अंतिम परिणति है। जिस तरह सूर, मीरा और कबीर श्रृंगारिक वर्णन शान्त रस के अंतर्गत माने जाते हैं, उसी तरह पदमावत का समग्र प्रभाव शान्त रस समन्वित है, श्रृंगार रस वाला नहीं। अतः लौकिक कथा की दृष्टि से पदमावत में विप्रलम्भ श्रृंगार अंगी है और आध्यात्मिक दृष्टि से वह शान्त रस प्रधान काव्य है।"[1]

ध्यानपूर्वक देखने से स्पष्ट हो जायेगा कि जायसी ने कहीं–कहीं कथा के बीच में अवसर आने पर अलौकिक सत्ता की ओर संकेत किया है, पर इसका यह तात्पर्य नहीं कि इसमें प्रस्तुत कथा ही गौड़ है। वस्तुतः रत्नसेन और पद्मावती रानी की कहानी ही इसमें प्रधान है और इसमें श्रृंगार रस की ही प्रधानता है। इसमें श्रृंगार रस का सुन्दर परिपाक हुआ है। संयोग और वियोग दोनों के सुन्दर चित्र पद्मावत में दर्शनीय हैं। वियोग श्रृंगार के वर्णन में जायसी एक महान् कलकार के रूप में पूर्ण सफल हैं। रत्नसेन–नागमती, रत्नसेन–पद्मावती को आलम्बन मानकर कवि ने संयोग श्रृंगार के कुछ चित्र उपस्थित किए हैं। षटऋतु वर्णन की योजना संयोग श्रृंगार के उद्दीपन के रूप में है। चित्तौड़ आने पर नागमती का मान और रत्नसेन की मधुर भर्त्सना में संयोग श्रृंगार का ही सौंदर्य है। विवाह के अनन्तर रत्नसेन–पद्मावती–समागम का चित्र भी संयोग श्रृंगार का ही है।

विप्रलम्भ श्रृंगार में जायसी ने अपनी प्रतिभा का सुन्दर प्रयोग किया है। नागमती का विरह–वर्णन हिन्दी विप्रलम्भ श्रृंगार की एक अनमोल निधि है। इस विरह वर्णन में गम्भीरता है और है विरह–व्यथा की सच्ची अनुभूति। पदमावत का

---

1. हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास, डा0 शम्भूनाथ सिंह, पृ0 477.

बारहमासा वियोग श्रृंगार के उद्दीपन विभाव के रूप में वर्तमान है।

रत्नसेन के चित्तौड़ से सिंहल की ओर विदा होते समय उसकी माता और अन्य रानियों का क्रन्दन एवं उनकी शोक–विह्वल दशा करुणा रस के अन्तर्गत हैं। 'सिंहल से रत्नसेन की विदाई' भी करुणा–रस कारक सुन्दर स्थल है। लक्ष्मी समुद्र खण्ड में भयानक रस मिलता है। युद्ध के प्रसंगों में वीर रस की प्रधानता है। यद्यपि जायसी मुख्य रूप से श्रृंगार के कवि हैं, फिर भी पदमावत में अन्य रसों का सुन्दर परिपाक हुआ है। अलाउद्दीन के साथ युद्ध में गोरा की मृत्यु तथा देवपाल के साथ रत्नसेन की मृत्यु की घटनाओं में पाश्चात्य ढंग की निगति की अवस्था दिखाई पड़ती है और अन्त में नागमती–पदमावती का सती होना, स्त्रियों का जौहर, बादल की मृत्यु और चित्तौड़ पर अलाउद्दीन का अधिकार आदि घटनाओं में पाश्चात्य ढंग की अंतिम कार्यावस्था–अवसान का रूप दिखाई पड़ता है। इस तरह पदमावत का अन्त पाश्चात्य महाकाव्य के ढंग का है, उसमें पाश्चात्य नाटकों के ढंग की प्रभावान्वित मिलती है। इस प्रभावान्विति में पाश्चात्य काव्यों की तरह उद्वेग और अशान्ति मूलक तीव्रता और स्तब्ध कर देने वाली वेदना नहीं है, बल्कि शान्तिपूर्ण गम्भीरता और चिरस्थायी निर्मलता और पवित्रता है, जो पाठकों के चित्त को अभिभूत कर उन्हें असाधारण भावलोक में पहुँचा देती हैं। इस तरह उसमें रसात्मकता के साथ गम्भीर प्रभावान्विति भी मिलती है।"[1]

वस्तु–वर्णन

युग जीवन का एक संपूर्ण और जीवन्त चित्र उपस्थित करने के लिए महाकाव्य में जीवन के अनेक प्रसंगों और प्रकृति के विविध रूपों का विशद, कलात्मक और प्रभु–विष्णु वर्णन होता है। ये वर्णन–वैविध्य रसाभिव्यक्ति एवं भावोद्रेक के

---

1. डा0 शम्भूनाथ सिंह : हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप–विकास, पृ0 478.

सहायक होकर आते हैं।

पदमावत में वस्तु–वर्णन के प्रसंगों में जायसी ने अपनी असाधारण वर्णन–शक्ति का परिचय दिया है। सिंहल द्वीप, जलक्रीडा, सिंहलद्वीप–यात्रा, समुद्र, विवाह, युद्ध, नखशिख, आदि के माध्यम से जायसी ने पदमावत में विविध वस्तुओं के वर्णनों की योजना करते हुए अपने काव्य–कौशल का परिचय दिया है। सिंहलद्वीप वर्णन के अन्तर्गत अमराई, सरोवर, कुएँ, नगर हाट दुर्ग प्रभृति वर्णनों का समावेश है। अमराई, सरोवर, नगर और दुर्ग के वर्णनों में पर्याप्त सजीवता और जीवन्तता है। सिंहल के पनघट का हुलसित वर्णन और वहाँ की पनिहारिनियों का विलसित सौन्दर्य जायसी की कवित्व शक्ति और वर्णन की कुशलता एवं सुन्दरता के परिचायक हैं। 'मानसरोदक खंड' में 'जल–क्रीड़ा' वर्णन के साथ ही पद्मिनी के रूप का अनुपम चित्रण किया गया है।

सरवर तीर पद्मिनी आई। खोंपा छोरि केस मुकुलाई।।
ससि–मुख अंग मलयगिरि बासा। नागिन झाँपि लीन्ह चहुँपासा।।
ओनई घटा परी जग छाहाँ। ससि कै सरन लीन्ह जनु राहां।।
छपि गै दिनहिं भानु के दसा। लेइ निसि नरवत चाँद परगसा।।
भूलि चकोर दीठि मुख लावा। मेघ घटा महं चन्द देखावा[1]।।

सात समुद्रों के काल्पनिक वर्णन भी मनोरम हैं। भीषणता, दुस्तरता, ताड़–पहाड़ की तरह लहरें आदि के चित्रण बने पड़े हैं। रत्नसेन–पदमावती के विवाह वर्णन के प्रसंग में हिन्दुओं में प्रचलित विवाह–पद्धति का सुन्दर वर्णन किया गया है।[2] युद्ध–वर्णन अत्यन्त जीवन्त हैं। सैनिकों का भिड़ना, शस्त्रों की झनकार, हाथी–घोड़ों की चिग्घाड़, शस्त्र–प्रहार, रुण्ड–मुण्ड का गिरना, रक्त–स्राव प्रभृति

---

1. जा0ग्रं0 पदमावत, मानसरोदक, खंड दोहा 4.
2. शिवसहाय पाठक : पद्मावत का काव्य–सौंदर्य।

वर्णनों में पूर्णतः सजीवता वर्तमान है।

इस प्रकार पदमावत में वस्तु वर्णन का वैविध्य और विस्तार दिखाई पड़ता है। नगर, दुर्ग, यात्रा, मन्त्रण, जल–क्रीड़ा, दूत, युद्ध, पुत्रोदय, विवाह, विरह संयोग, आदि के वर्णनों से एक युग का समय रूप चित्रित हो गया है। इन वर्णनों में यद्यपि कहीं–कहीं अनावश्यक विस्तार लक्षित होता है, फिर भी इनसे कथा में रसात्मकता और सौंदर्य की निष्पत्ति होती है।

महत्कार्य

भारतीय लक्षण ग्रन्थकारों के मतानुसार महाकाव्य का कार्य महत् होना चाहिये। पं0 रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि पदमावत में कार्य है 'पदमावती का सती होना।'[1] रामकृष्ण शिलीमुख[2] का कथन है कि पदमावती की प्राप्ति ही कार्य है। डा0 शम्भूनाथ सिंह[3] का कथन है कि पदमावत, पृथ्वीराज–रासो या आल्ह खण्ड में 'महत्कार्य' ढूंढ़ना बेकार है। उनका कथन है कि पदमावत में पाश्चात्य देशों के नाटकों की तरह 'कार्यक्षय' या 'नायक का विनाश' दिखाया गया है।

यह स्पष्ट है कि जायसी का लक्ष्य है प्रेम–पंथ का निरूपण। दृश्यकाव्यों की ही भाँति प्रबन्ध काव्य के विन्यास में भी 'कार्य' महत्वपूर्ण होता है। अरस्तू ने इसे 'युनिटी आव ऐक्शन' (कार्यान्वय) की संज्ञा दी है। शुक्लजी का कथन ठीक ही है कि 'पदमावत' का कार्य है पदमावती का सती होना। समस्त घटनायें और वृतान्त 'कार्य' तक पहुँचाने में सहायक है। इसी दृष्टि से हीरामन शुक और राघव चेतन का उतना ही वृत्त आया है, जितने का कार्य की ओर अग्रसर करने में योग है। पदमावत की समस्त घटनायें कार्य से सम्बद्ध हैं।

---

1. पं0 रामचन्द्र शुक्ल : जायसी ग्रंथावली (भूमिका), पृ0 73–74.
2. रामकृष्ण शिलीमुख : सुकवि–समीक्षा, पृ0 71 (हिन्दी महाकाव्यों के स्वरूप–विकास में उद्धृत)।
3. डा0 शम्भूनाथ सिंह : हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप–विकास, पृ0 435.

प्राचीन विद्वानों की यह मान्यता थी कि कार्य महत्वपूर्ण होना चाहिए। नैतिक, सामाजिक या धार्मिक प्रभाव की दृष्टि से कार्य बड़ा होना चाहिए, जैसा 'रामचरितमानस' में रावण का वध है और 'पदमावत' में पद्मिनी का सती होना। आधुनिक काव्य–मर्मज्ञ यह बात नहीं मानते। आर्नल्ड ने प्राचीन आदर्श का समर्थन किया है। जो हो, जायसी का भी यही आदर्श है। उन्होंने अपने कार्य के लिए महत्कार्य चुना है, जिसका आयोजन करने वाली घटनाएँ भी बड़े डीलडौल की हैं, जैसे बड़े–बड़े कुंवरों और सरदारों की तैयारी, राजाओं और बादशाहों की लड़ाई इत्यादि। इसी प्रकार दृश्य वर्णन भी ऐसे आते हैं, जैसे गढ़, वाटिका, राजसभा, राजसी भोज और उत्सव आदि के वर्णन।[1]

उदात्त भाषाशैली

महाकाव्य में भाषा–शैली की गरिमा आवश्यक है। महान् विषय के प्रतिपादन और उदात्त भावों की उत्कृष्ट व्यंजना के लिए महाकाव्य की भाषा और शिल्प–विधान में भी गरिमा आवश्यक है। विद्वानों का कथन है कि 'पदमावत' में महाकाव्यों (संस्कृत के) चरित काव्यों (अपभ्रंश के) और मसनवी काव्यों के तत्वों का सुन्दर समावेश हुआ है। इसीलिए पदमावत की शैली में इन तीनों प्रकार के काव्यों की गरिमामयी शैली के दर्शन होते हैं। डा0 माताप्रसाद गुप्त का कथन है कि पदमावत में खंडों या सर्गों का विभाजन नहीं हैं। कथा आद्यन्त धारा–प्रवाह रूप में लिखी गई हैं। इसी कारण यदि कोई कहे कि पद्मावत सर्ग बन्ध रचना नहीं है, तो यह ठीक नहीं होगा, क्योंकि पदमावत की अनेक प्राचीन प्रतियों में कथा को खण्डों में विभाजित किया गया है। ग्रियर्सन, शुक्लजी, डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल आदि विद्वानों ने अपने संस्करणों में भी खण्डों की व्यवस्था की है और जब तक कोई

---

1. पं0 रामचन्द्र शुक्ल : जायसी ग्रन्थावली, भूमिका, पृ0 74–75.

अत्यन्त प्राचीन, कवि की समसामयिक या उसकी मूलप्रति नहीं मिलती, जिसमें 'खण्ड' विधान न हो तब तक यह बात स्वीकार्य नहीं है। दूसरे प्राकृत अपभ्रंश में बिना खण्ड–विधान या सर्ग विधान के भी प्रबन्ध काव्य लिखे गए हैं। तीसरें यदि सर्गबद्धता महाकाव्य का स्थिर और अन्तरिक लक्षण नहीं है। अतः 'खण्ड' – विभाजन न होने पर भी पद्मावत के महाकाव्य में किसी प्रकार की बाधा नहीं उपस्थित होती। अन्य वाह्य लक्षणों में प्रारम्भ में नामस्क्रिया, आशीर्वचन वस्तु–निर्देश आदि के विधान पदमावत में मिलते हैं। गउड़बहो की भाँति इसका भी मंगलाचरण बहुत लम्बा है। समासोक्ति, प्रतीक, संकेत और रोमांचक शैलीजन्य सौन्दर्य पदमावत में दर्शनीय हैं। पदमावत की भाषा ठेठ अवधी है। उसमें बीच–बीच में पुराने अपभ्रंश–प्रयोग भी मिलते हैं। उसमें सर्वत्र व्याकरण–समस्त ठेठ अवधी भाषा का निराला माधुर्य भरा हुआ है। मुहावरे, सुक्तियां–लोकोक्तियाँ कहावतें उसके सौन्दर्य–बर्द्धन के लिए अत्यन्त स्वाभाविक रूप में सुप्रयुक्त हैं। जायसी की भाषा भावाभिव्यंजना में सर्वत्र पूर्णतः समर्थ, स्वाभाविक और सरस है।

पदमावत में आद्यत दोहा–चौपाई की कड़बक पद्धति अपनाई गई है। अपभ्रंश के अनेक चरित काव्यों में भी इसी प्रकार की कड़बक–पद्धति के दर्शन होते हैं। पदमावत में जायसी ने प्रत्येक कड़बक में सात अर्द्धालियाँ साढ़े तीन चौपाइयाँ रखी हैं– उन्होंने सभी कड़बकों में चौपाई छन्द का और कड़बक में घताक रूप में दोहा छन्द का प्रयोग किया है।

पदमावत में कहने की शैली अत्यन्त अकृत्रिम, प्रवाहपूर्ण सरल और प्रभविष्णु है। "अतः सरल किन्तु गम्भीर, सहज किन्तु उदात्त, माधुर्यपूर्ण किन्तु गरिमामयी शैली के योग की दृष्टि से पदमावत हिन्दी में अपने ढंग का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है।"[1]

---

1. डा0 शम्भूनाथ सिंह : हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप–विकास, पृ0 476.

महान् उद्देश्य

महाकाव्य के निर्माण के मूल में महान् उद्देश्य का होना आवश्यक है। 'चतुर्वर्ग' में से किसी एक की प्राप्ति को भारतीय आचार्यों ने महाकाव्य का उद्देश्य स्वीकार किया है। आत्म–परिष्कार और मानव–जीवन का उत्थान भी महाकाव्य का मुख्य उद्देश्य माना गया है, सत् की असत् पर न्याय की अन्याय पर, पुण्य की पाप पर विजय का चित्रण करता हुआ महाकाव्यकार 'शिवम्' 'लोकमंगल' को ही साध्य मानता है।

डा0 शम्भूनाथ सिंह का विचार है कि पदमावत के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि उसका उद्देश्य महान् है। "यह कवि की महती काव्य–प्रतिभा से पुष्ट होकर इस काव्य को हिन्दी के अन्य सभी प्रबन्ध काव्यों से भिन्न एक निराले और उच्च पद पर बिठा देता है। काम मोक्ष की प्राप्ति उसका उद्देश्य है। यह अवश्य है कि पदमावत का कवि लौकिक प्रेम कथा के माध्यम से अलौकिक प्रेम की अनुभूति का आभास भी देता चलता है। अतः मोक्ष–प्राप्ति ही पदमावत का प्रधान फल है। –– अतः अप्रत्यक्षतः पदमावत का फल मोक्ष है।"[1] भले ही अप्रत्यक्ष रूप से पदमावत का उद्देश्य मोक्ष हो, पर जायसी ने प्रत्यक्ष रूप से 'काम' की ही प्रतिपादना की है सिद्धान्त–प्रतिपादन, आध्यात्मिकता आदि की बातें पदमावत में मिल सकती हैं, पर है वह काव्य–ग्रन्थ–शृंगार–प्रधान ग्रन्थ–जिसमें मुख्य रूप से काम ही साध्य है।

व्यावहारिक और कलात्मक दृष्टिकोणों से देखने पर भी पदमावत का उद्देश्य महान् दिखाई पड़ता है। "पदमावत में मानवता के उस सच्चे स्वरूप का उद्घाटन किया गया है, जो प्रेम, उदारता, त्याग, साहस, सहिष्णुता और बलिदान की व्यापक भूमिका पर प्रतिष्ठित है। अतः उसका उद्देश्य व्यापक और उदार मानवता का प्रसार और मानव–हृदय का विस्तार और परिष्कार करना है। मनुष्य इस

---

1. डा0 शम्भूनाथ सिंह : हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप–विकास, पृ0 429.

काव्य–सरोबर में स्नान करके स्वाभाविक और विशुद्ध मानव बनकर निकलता है। उसका हृदय कोमल उदार और प्रशस्त बन गया रहता है।" शुक्लजी का कथन है कि "एक ही गुप्त तार मनुष्य मात्र के हृदयों से होता हुआ गया है, जिसे छूते ही मनुष्य सारे बाहरी रूप–रंग के भेदों की ओर से ध्यान हटा एकत्व का अनुभव करने लगता है। "जायसी ने अपने महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसी गुप्त तार को झंकृत करके मनुष्य मात्र[1] के, चाहे वह जिस जाति, धर्म या वर्ग का हो हृदय को जागृत और प्रेम–प्लावित करने का प्रयत्न किया है।"

इस उद्देश्य के लिये उन्होंने मानव की रागात्मिका वृत्ति–काम–को व्यापक अर्थों में गृहीत किया है। इसी के माध्यम से जायसी ने प्रत्यक्ष–जीवन की एकता का दृश्य उपस्थित किया। उन्होंने हिन्दू और मुसलमान के बीच की दूरी को स्नेहामृत से भर कर एकत्व की प्रतिष्ठा की है।

---

1. पं0 रामचन्द्र शुक्ल : जा0ग्रं0 भूमिका, पृष्ठ 2.